साप्ताहिक
Live not just breaTHE

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

दि कार्मिक पोस्ट

वर्ष : 6, अंक : 9 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 21 अक्टूबर से 27 अक्टूबर 2020 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

वायु प्रदूषण में भारत की हालत पाकिस्तान से भी बदतर, 2019 में 1.16 लाख नवजातों की पलूशन से गई जान

नई दिल्ली। देश में वायु प्रदूषण के कारण नवजातों के जीवन पर पड़ने वाला असर कितना घातक है, इसके संबंध में अमेरिका के एक संस्थान ने अपनी एक रिपोर्ट जारी की है। यूएस के हेल्थ इफेक्ट इंस्टीट्यूट की ओर से जारी स्टेट ऑफ ग्लोबल एयर-2020 रिपोर्ट में भारत में वायु प्रदूषण और इसके कारण नवजातों की मौत के आंकड़े जारी किए गए हैं।

रिपोर्ट में दावा किया गया है कि साल 2019 में 1.16 लाख से अधिक नवजात बच्चों की मौत एयर पलूशन के कारण हुई है। मरने वाले इन सभी बच्चों ने जन्म के एक महीने के भीतर अपनी जान गंवाई है। इस रिपोर्ट में भारत के अलावा नाईजीरिया (67900 मौत), पाकिस्तान (56,700 मौत), इथिपोया (22,900 मौत) जैसे देशों के नाम भी शामिल हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि मौत के बायोलॉजिकल कारणों पर स्पष्टता से नहीं कहा जा सकता, लेकिन यह जरूर है कि प्रदूषण के कारण गर्भवती महिलाओं और उनके बच्चों पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। इसके अलावा प्री-मैच्योर और कम वजन वाले बच्चों पर भी वातावरण का ज्यादा प्रभाव पड़ता है। इसके साथ एक बात यह भी है कि भ्रूण के विकास के दौरान वायु प्रदूषण के नकारात्मक प्रभाव बच्चे की सेहत पर भी असर डालते हैं। इसके कारण कई बार बच्चों की प्री-मैच्योर डिलिवरी या कमजोर होने की स्थितियां भी देखने को मिलती हैं।

डबल्यूएचओ के मानकों के अनुरूप एयर क्वालिटी की जरूरत

इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च के सेंटर ऑफ अडवांस रिसर्च ऑन एयर क्वालिटी की निदेशक कल्पना बालकृष्ण का भी कहना है कि अगर देश में डबल्यूएचओ के मानकों के हिसाब से एयर क्वालिटी को मेंटेन किया जा सकता तो हम करीब 1.16 लाख बच्चों की जान बचा सकते थे। उन्होंने कहा कि बच्चों की सेहत सुधारने के लिए जो उपाय हम निजी स्तर पर कर सकते हैं, वो करने की कोशिश जरूर होती है लेकिन जब बात प्रदूषण के कंट्रोल की हो तो इसके लिए एक बड़ी जनसंख्या की भागीदारी की जरूरत है। ऐसा ना होने पर देश का एक बड़ा हिस्सा हमेशा खतरे में रहता है। इसके अलावा भारत में बच्चों के जन्म के दौरान कम वजन का होने पर उनकी सेहत पर खतरा हमेशा अधिक होता है। ऐसे में बाहरी कारण ऐसे बच्चों को जल्दी प्रभावित करते भी है।

मंगल ग्रह पर ग्लेशियरों के नीचे मौजूद हैं कई झीलें

अगर कभी मानव मंगल पर बसने की कोशिश करे, तो मंगल का दक्षिणी ध्रुव बेस बनाने के लिए सबसे सटीक स्थलों में से एक होगा। शोधकर्ताओं ने अल्टिमी स्कूपुली नाम के एक क्षेत्र में मौजूद बर्फीले ग्लेशियरों के नीचे तीन नमकीन वॉटरबॉडी (झील) का पता लगाया है। यह जानकारी मंगल पर सूक्ष्मजीव की मौजूदगी के साथ ही मंगल पर मानव के बसने की संभावनाओं को बढ़ा देते हैं। यह रिसर्च परिणाम 28 सितंबर को नेचर एस्ट्रोनॉमी में प्रकाशित हुआ था। ये परिणाम 2003 में यूरोपियन स्पेस एजेंसी द्वारा लांच मार्स एक्सप्रेस स्पेसक्राफ्ट के जरिए शुरू किए गए मार्स एडवांस्ड राडार फॉर सब्सर्फेस एंड आयनोस्फेयर साउंडिंग (मार्सिस) के

डेटा विश्लेषण से मिले हैं। मार्सिस रेडियो तरंगों को मार्टियन सतह पर भेजता है और रिफ्लेक्ट होकर आने वाली तरंगों की व्याख्या करता है।

वैज्ञानिकों ने पृथ्वी के ध्रुवों के पास बर्फ की चादर के नीचे तरल झीलों को खोजने के लिए जिस तकनीक का इस्तेमाल किया था, यहां भी उसी तकनीक का इस्तेमाल किया गया है। 2012 से 2015 के बीच किए गए 29 अवलोकनों के जरिए रिसर्च टीम को 2018 में 19 किलोमीटर चौड़े एकल खारे पानी (सिंगल साल्टवाटर) झील के प्रमाण मिले थे। इस टीम को अब 105 और अवलोकनों के जरिए तीन बड़ी वाटरबॉडी और तीन छोटी वॉटरबॉडी के और अधिक प्रमाणिक सबूत मिले हैं।

पराली के लिए किसानों को कोसना कितना सही?

क्या किसानों को अपने खेतों में पराली न जलाने के एवज में पैसे मिलने चाहिए? आज के समय में यह सबसे विवादास्पद मुद्दों में से एक है क्योंकि उत्तर भारत में सर्दियों की शुरुआत हो चुकी है और यही वह समय है जब खेतों में पराली जलाई जाती है। यह प्रदूषण हवा के माध्यम से दिल्ली तक पहुंच जाता है। यह किसी से नहीं छुपा कि दिल्ली गाड़ियों के धुएं और प्रदूषण के अन्य स्थानीय कारणों के फलस्वरूप पहले से ही बेदम है। तर्क यह है कि सरकार द्वारा नकद सहायता मिलने पर किसान अपने खेतों में आग नहीं लगाएंगे।

स्वच्छ वायु के लिए लगातार अभियान चलाने और एक पर्यावरणविद होने के नाते मेरा यह मानना है कि इस प्रोत्साहन का उल्टा असर पड़ेगा। दूसरे शब्दों में, इस मदद का दुरुपयोग होना आसान है क्योंकि नकद सहायता पाने के लिए किसान पहले से अधिक मात्रा में पराली जलाएंगे और हर साल नकद सहायता की राशि में वृद्धि करनी होगी। इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि यह प्रोत्साहन इस कुरीति को बढ़ा सकता है। लेकिन, सोशल मीडिया में मुझ पर लगातार हमले किए जा रहे हैं और मुझे इलीटिस्ट (संभ्रांतवादी), अज्ञानी एवं वास्तविकता से दूर बताया जा रहा है। इसी के साथ मुझे किसान विरोधी भी घोषित कर दिया गया है।

हालांकि सच्चाई यह है कि पिछले साल पंजाब सरकार ने प्रोत्साहन के रूप में 31,231 किसानों को कुल 29 करोड़ रुपए बांटे थे लेकिन उसके बावजूद पराली जलाने की घटनाओं में लगातार वृद्धि ही हुई है। लेकिन असली समस्या यह नहीं है। किसानों को सहायता की आवश्यकता है, इसमें कोई दो राय नहीं है।

मैं कृषि संकट की बड़ी समस्याओं के बारे में तो बात भी नहीं कर रही हूं। किसान चक्की के दो पाटों के बीच में फंसे हैं। जहां एक तरफ खेती की लागत लगातार बढ़ रही है, वहीं दूसरी तरफ किसानों पर उपभोक्ताओं के लिए मूल्य कम रखने का भी दबाव है। यह प्रणाली किसानों के श्रम को कम करके आंकने के साथ-साथ उनकी जमीन और जलीय संपदा को भी नुकसान पहुंचाती है। इसमें तत्काल सुधार किए जाने की आवश्यकता है। हमें समस्या को पहचानने और आगे बढ़ने का रास्ता तलाशने की जरूरत है। एक ऐसा रास्ता जो किसानों को आय दे और साथ ही साथ पर्यावरण को बचाने में भी सहयोग करे।

हम जानते हैं कि किसान पराली इसलिए जलाते हैं क्योंकि धान की फसल की कटाई और अगली गेहूं की फसल की बुवाई के बीच कुछ समय का अंतराल रहता है। हम यह भी जानते हैं कि इस अवधि को छोटा कर दिया गया है क्योंकि सरकार ने धान के रोपने में लगभग एक महीने की देरी को अधिसूचित किया है। ऐसा इसलिए ताकि फसल मानसून के आगमन के आसपास लगाई जा सके। यह सब इसलिए किया गया है ताकि किसान भूजल का अत्यधिक इस्तेमाल न करें।

आप यह तर्क दे सकते हैं कि किसानों को इन पानी के संकट वाले क्षेत्रों में धान की रोपाई नहीं करनी चाहिए। आपकी बात सही भी है। लेकिन जवाब जटिल है क्योंकि सरकारें एक न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के अनुसार धान की खरीद करती हैं। इसके फलस्वरूप किसान एक अजीब से चक्कर में पड़ जाते हैं। बासमती धान की पराली जलाई नहीं जाती क्योंकि उसका इस्तेमाल पशुओं के चारे के लिए होता है। लेकिन बासमती धान एमएसपी के अंदर नहीं आता है क्योंकि इसका अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कारोबार किया जा सकता है। इसलिए, किसान अब भी गैर-बासमती धान को एमएसपी के लिए उगाते हैं और फिर उनके पास ठूंठ को जलाने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। इसलिए उनका दम तो घुटता है ही, साथ ही साथ हमारी सांसों पर भी आफत आन पड़ती है।

इस समस्या के समाधान के तीन पहलू हैं। पहला, मशीनों की मदद से पराली को वापस जमीन में ही दबा दिया जाए और ऐसा इस प्रकार किया जाए जिससे गेहूं की फसल की बुवाई में कोई व्यवधान न पहुंचे। लेकिन ये कृषि उपकरण महंगे हैं (कुछ साल पहले तक ये उपलब्ध भी नहीं थे), इसलिए, पिछले दो वर्षों में, केंद्र सरकार ने धनराशि प्रदान की है, ताकि राज्य सरकारें इन मशीनों की खरीद कर सकें और उन्हें किसानों को बिना किसी लागत या न्यूनतम लागत पर उपलब्ध करा सकें। वर्ष 2020 में पराली जलाने के मौसम की शुरुआत तक, अकेले पंजाब में लगभग 50,000 मशीनों (मशीन केंद्रों व व्यक्तिगत किसानों को) को 80 प्रतिशत अनुदान पर दिया गया था। जैव ईंधन को वापस जमीन में दबाने से मिट्टी की उर्वरता में भी सुधार होगा।

समाधान का दूसरा पहलू जैव ईंधन को मूल्य प्रदान करना है। अगर किसानों को पराली की कीमत दी जाए तो वे उसे नहीं जलाएंगे। इस क्षेत्र में कई संभावनाएं हैं। ऊर्जा उत्पादन से लेकर कंप्रेस्ड बायोगैस (सीबीजी) बनाने के लिए पराली का उपयोग करने तक। इस क्षेत्र में भी बहुत कुछ हो रहा है। पहला सीबीजी प्रोजेक्ट 2021 की शुरुआत में चालू हो जाना चाहिए। इसके अलावा कई और परियोजनाओं पर भी काम चालू है।

पिछले महीने, भारतीय रिजर्व बैंक ने ऋण देने की प्राथमिकता सूची में सीबीजी को शामिल किया है। इसके अलावा भारतीय स्टेट बैंक ने एक ऋण योजना चालू की है और तेल कंपनियों ने भी अगले पांच वर्षों तक 46 रुपए प्रति किलोग्राम की दर से पराली खरीदने के लिए हामी भरी है। अत: आज जो पराली हम जला रहे हैं, उसे वाहनों में प्रयोग के लिए ईंधन के रूप में बदला जाएगा। इसके अलावा पुराने बिजली संयंत्रों में कोयले की जगह पराली का उपयोग करने का विकल्प भी है। यह न केवल बुनियादी ढांचे को विस्तारित करने में मदद करेगा, बल्कि पर्यावरणीय लागत को भी कम करेगा। तीसरा विकल्प किसानों को धान की बजाय अन्य फसलें उगाने के लिए प्रेरित करना और उनके फसल विकल्पों में विविधता लाना है। जाहिर है कि यह एक बड़ी चुनौती है लेकिन यही समय की मांग है।

तथ्य यह है कि किसानों को वास्तविक विकल्प प्रदान करने के लिए हमें बहुत कुछ करने की आवश्यकता है।

उदाहरण के लिए, उन्हें मृदा जैविक कार्बन के पारिस्थितिक तंत्र सेवा के लिए भुगतान किया जा सकता है। लेकिन ये सब इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे इस क्षेत्र में सकारात्मक हस्तक्षेपों की नींव पड़े। नकद प्रोत्साहन न मिलने की सूरत में किसान पराली जलाने को मजबूर हैं, ऐसा कहना उनके साथ अन्याय होगा और उसकी कीमत हम सबके बच्चों के फेफड़ों को चुकानी होगी।

पर्यावरण मानकों को पूरा करने वाले थर्मल प्लांट को दिया जाए इंसेंटिव- सीएसई

सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरमेंट (सीएसई) की नई रिपोर्ट में पर्यावरण मानकों का पालन करने वाले कोयला आधारित पावर प्लांट्स को इंसेंटिव देने की सिफारिश की है। साथ ही, जो पावर प्लांट्स पर्यावरण मानकों की पालना नहीं कर रहे हैं, उन्हें दंडित करने को कहा है।

सीएसई 21 अक्टूबर को एक वैबनार में एक अपनी यह रिपोर्ट जारी करेगा। यह रिपोर्ट फर्स्ट रन अवधारणा पर आधारित है, जिसमें कहा गया है कि स्वच्छ पावर स्टेशन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। ताकि 2015 में निर्धारित उत्सर्जन मानकों की डेडलाइन का लक्ष्य हासिल किया जा सके।

सरकार ने स्वच्छ ऊर्जा उत्पादन के लिए कई कदम उठाए हैं। खासकर अक्षय ऊर्जा उत्पादन की दिशा में महत्वपूर्ण काम किया गया। बावजूद इसके, अभी भी कोयले से चलने वाले पावर प्लांट्स का कुल बिजली उत्पादन में 89 फीसदी हिस्सेदारी है। अभी कोयले से चलने वाले पावर प्लांट्स की उत्पादन क्षमता 2,05,312 मेगावाट है।

भारत में कोयले से चलने वाले थर्मल प्लांट्स प्रदूषण का एक बड़ा कारण माना जाता है, इसलिए केंद्रीय पर्यावरण मंत्रालय ने 7 दिसंबर 2015 में थर्मल पावर प्लांट्स के लिए पर्यावरण मानकों की घोषणा की थी और कहा था कि सभी थर्मल प्लांट्स को 2017 तक इन मानकों के मुताबिक बिजली उत्पादन करना होगा।

पावर इंडस्ट्री ने इन मानकों को पूरा करने में असमर्थता जताई तो सरकार ने 2022 तक का समय दे दिया, ताकि सभी थर्मल प्लांट्स आवश्यक बदलाव कर पर्यावरण मानकों की अनुपालन सुनिश्चित करें। हाल ही में सीएसई ने एक व्यापक अध्ययन के बाद रिपोर्ट जारी की और कहा कि तय डेडलाइन तक लगभग 65 फीसदी पावर प्लांट पर्यावरण मानकों को लागू नहीं कर पाएंगे, जबकि 35 फीसदी प्लांट इस पर खरे उतर पाएंगे।

अब सीएसई ने कहा है कि जो थर्मल प्लांट पर्यावरण मानकों को पूरा करने में तत्परता दिखा रहे हैं, उन्हें सरकार की ओर से इंसेंटिव दिए जाने चाहिए। खासकर इन प्लांट से बिजली खरीदने में प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इससे ये प्लांट अपनी पूरी क्षमता से चलेंगे।

सीएसई ने अपनी रिपोर्ट में यह भी कहा है कि जो थर्मल प्लांट पर्यावरण मानकों को पूरा करने में तत्परता नहीं दिखा रहे हैं, ऐसे प्लांट के खिलाफ दंडात्मक कार्रवाई की जानी चाहिए।

सीएसई ने इससे पहली अपनी एक रिपोर्ट में कहा था कि भारत में कोयला से चलने वाले पावर प्लांट अन्य उद्योगों की तुलना में सबसे ज्यादा प्रदूषण फैलाते हैं। पूरी इंडस्ट्री से जितने पीएम का उत्सर्जन होता है, उनमें से 60 प्रतिशत उत्सर्जन थर्मल प्लांट्स से होता है। इसी तरह कुल सल्फर डाई-ऑक्साईड उत्सर्जन का 45 प्रतिशत, कुल नाइट्रोजन के उत्सर्जन का 30 प्रतिशत तथा कुल पारा के उत्सर्जन का 80 प्रतिशत थर्मल प्लांट्स से होता है।

वायु प्रदूषण रोकने के लिए ई-वाहनों को बढ़ावा देगी तमिलनाडु सरकार

तमिलनाडु ने हवा में बढ़ते प्रदूषण की रोकथाम के लिए उठाए जाने क़दमों पर एक रिपोर्ट नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (एनजीटी) में सबमिट की है। इस रिपोर्ट में वाहनों से होने वाले प्रदूषण की रोकथाम पर जोर दिया गया है। रिपोर्ट में जानकारी दी गई है कि वायु प्रदूषण को कम करने के लिए तमिलनाडु सरकार ई-वाहनों की खरीद को बढ़ावा देगी। जिसके लिए कई कदम भी उठाए जा रहे हैं। यह रिपोर्ट 16 अक्टूबर, 2020 को एनजीटी की वेबसाइट पर अपलोड की गई है। गौरतलब है कि तमिलनाडु इलेक्ट्रिक व्हीकल पॉलिसी 2019 में ई-वाहनों के निर्माताओं और खरीदने वालों के लिए विभिन्न रियायतें प्रदान की गई हैं। तमिलनाडु सरकार ने ई-वाहनों के निर्माण के लिए 50,000 करोड़ के निवेश को लाने का लक्ष्य रखा है। जिसकी मदद से पर्यावरण अनुकूल वाहनों को बढ़ाया जा सके। साथ ही इन वाहनों को चार्ज करने और उसके लिए बैटरियों के निर्माण, रीसायकल, पुन: उपयोग और ख़राब हो चुकी बैटरियों के निपटान की समुचित व्यवस्था करना है जिससे उनसे होने वाले प्रदूषण को कम से कम किया जा सके।

1950 से बढ़ती ऊर्जा खपत ने पर्यावरण को भारी नुकसान पहुंचाया

एक नए अध्ययन में कहा गया है कि ऊर्जा का बढ़ता उपयोग, आर्थिक उत्पादकता और बढ़ती वैश्विक आबादी की गति ने पृथ्वी को एक नए भूवैज्ञानिक युग की ओर धकेल दिया है, जिसे एंथ्रोपोसीन के रूप में जाना जाता है। शोध में पाया गया कि वर्ष 1950 के आसपास पृथ्वी की सतह की परतों में भौतिक, रासायनिक और जैविक परिवर्तन शुरू हुए थे।

सीयू बोल्डर की प्रोफेसर एमेरिटा और इंस्टीट्यूट ऑफ अल्पाइन आर्कटिक रिसर्च (इन्स्टार) के पूर्व निदेशक जया सिवित्स्की की अगुवाई में किया गया अध्ययन नेचर कम्युनिकेशंस अर्थ एंड एनवायरनमेंट में प्रकाशित हुआ है। पिछले 11,700 वर्षों से पर्यावरण में बदलाव करने वालों को होलोसीन युग के रूप में जाना जाता है। 1950 के बाद से इसमें नाटकीय तरीके से मानव जनित बदलाव हुए। ऐसे व्यापक परिवर्तन से महासागरों, नदियों, झीलों, तटीय इलाकों, वनस्पति, मिट्टी, रसायन और जलवायु में परिवर्तन हुए हैं।

सिवित्स्की ने कहा कि यह पहली बार है कि जब वैज्ञानिकों ने इतने व्यापक पैमाने पर लोगों द्वारा किए गए बदलाव का दस्तावेजीकरण किया है। 11,700 वर्ष पहले की गई ऊर्जा खपत को हम लोग पिछले 70 वर्षों में ही पार कर कर चुके हैं। इसमें बड़े पैमाने पर जीवाश्म ईंधन का उपयोग किया गया है। ऊर्जा खपत में इस भारी वृद्धि ने तब मानव आबादी, औद्योगिक गतिविधि, प्रदूषण, पर्यावरणीय गिरावट और जलवायु परिवर्तन में नाटकीय वृद्धि की है। यह अध्ययन एंथ्रोपोसीन वर्किंग ग्रुप (एडब्ल्यूजी) द्वारा किए गए काम का परिणाम है। यह वैज्ञानिकों का एक ऐसा समूह है जो पृथ्वी पर भारी मानव प्रभाव की विशेषता वाले आधिकारिक भूवैज्ञानिक समय के भीतर एंथ्रोपोसीन को एक नया युग बनाने के लिए मामले का विश्लेषण करता है। एन्थ्रोपोसीन शब्द भूगर्भीय रूप से परिभाषित लंबे समय को निर्दिष्ट करने के लिए उपयोग किया जाता है। वर्तमान में मानव पृथ्वी प्रणालियों पर हावी हो रहा है। भूवैज्ञानिक समय, एक युग एक आयु से अधिक है, लेकिन एक अवधि से कम है, जिसे लाखों वर्षों में मापा जाता है। होलोसीन युग के भीतर, कई युग हैं- लेकिन एंथ्रोपोसीन को पृथ्वी के ग्रह के इतिहास के भीतर एक अलग युग के रूप में प्रस्तावित किया गया है।

एंथ्रोपोसीन के स्पष्ट निशान

18 अध्ययनकर्ताओं ने मौजूदा शोध को संकलित किया, जो 1950 से अब तक ऊर्जा की खपत और अन्य मानवीय गतिविधियों के कारण ग्रह पर पड़ने वाले 16 प्रमुख प्रभावों को उजागर कर रहे हैं। 1952 से 1980 के बीच मनुष्यों ने वैश्विक परमाणु हथियार परीक्षण को लेकर जमीन के ऊपर 500 से अधिक थर्मोन्यूक्लियर विस्फोट किए, जिसने पूरे ग्रह की सतह पर या उससे अधिक परमाणु ऊर्जा वाले रेडियोन्यूक्लाइड्स-परमाणुओं को धरती पर छोड़ा। लगभग 1950 के बाद से मनुष्यों ने कृषि के लिए औद्योगिक उत्पादन के माध्यम से ग्रह पर निश्चित नाइट्रोजन की मात्रा को दोगुना कर दिया है। उद्योगों से भारी पैमाने पर क्लोरोफ्लोरोकार्बन (सीएफसी) वातावरण में रिलीज हुई जिसने ओजोन परत को काफी नुकसान पहुंचाया। जीवाश्म ईंधन से ग्रह पर ग्रीनहाउस गैसों का स्तर बढ़ा।

बीते दिन पारिजात का पेड़ बहुत चर्चा में रहा। इस पेड़ को हरिसंगार के नाम से भी जाना जाता है। 2017 में एक ट्रेनिंग के दौरान, किन्ही सज्जन से मुलाकात हुई थी, जिनका नाम पारिजात था। वे बचपन से ही अमेरिका में रहे थे। लोगों के पूछने पर उन्होंने बहुत ही मधुर वाणी में अपने नाम का मतलब हिंदी में समझाया था और मैंने तभी जाना था कि हरसिंगार को ही पारिजात कहा जाता है! आजकल इस पेड़ पर फिर फूलों की बहार आयी है। ट्विटर और फेसबुक पर हर कोई हरसिंगार के लुभावने चित्र लगा रहा है। इस पेड़ के फूलों को शेऔली और प्राजक्ता के नाम से भी जाना जाता है। शायद ही कोई ऐसा इंसान हो, जिसने इन फूलों की मनमोहक आभा को महसूस न किया हो।

वो हरसिंगार का पेड़ और मौन संवाद

मेरे घर के सामने एक हरसिंगार का खूबसूरत पेड़ था। बचपन से ही एक अनूठा रिश्ता सा रहा है, मेरा हरसिंगार के साथ। अक्टूबर-नवंबर की ठंड में हरसिंगार के मोती जैसी फूलों से सजी हुई घर के सामने की वह सड़क। सुबह-सुबह, सीमेंट-कंक्रीट की हलकी काली सड़कों को हरसिंगार अपने फूलों से भर दिया करता। जैसे मानो, तारों से भरे काले आकाश का एक टुकड़ा कोई नीचे ले आया हो। हरसिंगार के फूल तो लगते भी तारे जैसे हैं। वैसे भी श्वेत रंग के फूलों की बात ही कुछ और होती है। पॉपुलर कल्चर में अनगिनत कहानियां, कविताएं एवं संगीत इन फूलों को समर्पित हैं। फिर चाहे चंपा हो, या चमेली, मोगरा, रजनीगंधा। या फिर अपना हरसिंगार!

घर के नीचे सुजाता आंटी रहा करती थीं। हरसिंगार का यह पेड़ बिलकुल उनके घर के सामने था। सुबह-सुबह मैं एक प्लेट लेकर झट से नीचे जाती और इन फूलों को बीन लाती। गजरा बनाने के लिए। भैया चीखते, स्कूल के लिए लेट हो जाओगी। लेकिन मुझे इसकी कहां परवाह होती थी। वैसे भी गलती चाहे किसी की भी हो, छोटे होने के नाते सारी डांट-डपट तो बड़े भाई-बहनों को ही पड़ा करती है। मेरे सामने तो बस एक ही लक्ष्य होता। जल्दी से सारे हरसिंगार बटोर लाऊं। कितनी ही बार पापा को आवाज दिया करती कि आकर जरा इस पेड़ की शाखाओं को झकझोर जाओ, ताकि सारे फूल एक ही बार में नीचे गिर जाएं, लेकिन वे ऐसा नहीं करते, क्योंकि ऐसा करने से क्या पता उस पेड़ को कोई तकलीफ होती हो?

एक बार सुजाता आंटी ने मुझे बांस की छोटी टोकरी दी और कहा इसमें फूल रख लो तो और भी सुन्दर लगेंगे। फूल बीनने के बाद मैं सुई-धागे से गजरा बना लेती और हर रोज़ किसी न किसी टीचर को वह गजरा गिफ्ट में दे दिया करती। हरसिंगार के फूल अत्यंत ही सौम्य होते हैं। इसलिए गजरा बहुत ध्यान से बनाना होता। गजरा बनाना मुझे लक्ष्मी दीदी, जो हमारे यहां मदद करने आया करती थीं, उन्होंने सिखाया था। वह बालों में मोगरा के फूलों का गजरा लगाती थीं, और मेरे लिए भी कई बार ले आती थीं।

फूल बीनने का यह सिलसिला कुछ सालों चला। फिर फिजिक्स, केमिस्ट्री, मैथ्स में जिंदगी उलझती चली गई। इंजीनियरिंग करनी है, कि आर्ट्स पढ़नी है? रेसनिक हॉलीडे कितनी सुलझा ली? ठंड के मौसम में रात में रेडियो सुनते-सुनते इंटीग्रेशन और केमिस्ट्री के न्यूमेरिकल्स सुलझाते हुए, मुझे याद भी नहीं रहा था वो हरसिंगार, जिसको एक समय में मैं कितना हक से अपना माना करती थी।

मैं धीरे-धीरे उस पेड़ को भूल गयी थी।

एक बार मुंबई से वापिस आयी तो चाय पीते हुए उस कोने पर नजर एकाएक ही पड़ी थी। वहां कुछ मिस्त्री कंक्रीट का काम कर रहे थे।सुजाता आंटी भी घर छोड़ कर जा चुकी थीं। मेरी नजर धीरे-धीरे जब उधर से गुजरी तो मैंने पाया था कि मेरा वो हरसिंगार तो अब वहां था ही नहीं। थोड़ी बेचैनी हुई थी। दिल न जाने क्यों भर सा आया था। शाम को मां जब ऑफिस से वापिस आयीं तो मैंने पूछा कि वह पेड़ कहां गया? मां कुछ लिखते हुए बोली थीं कि उसको किन्ही कारणों की वजह से वहां से लोगों ने %हटा% दिया। यानी शायद काट दिया। मां ने %काट% शब्द का इस्तेमाल इसीलिए नहीं किया था, क्योंकि वो तो शायद हमारे परिवार का ही एक हिस्सा बन चुका था।

मन व्यथित हो उठा। थोड़ा इसलिए कि पता नहीं, उस पेड़ को वहां से क्यों हटाया गया? या पता नहीं, उसको कितनी पीड़ा हुई होगी? पापा तो उसकी शाख तक छेड़ने को राजी नहीं होते थे, लेकिन ज़्यादा व्याकुल अपनी शर्मिंदगी के कारण हो उठी थी। इसलिए कि उस पेड़ के साथ-साथ मेरे बचपन का एक बहुत अहम अंश भी मुझसे अलग हो गया था, मेरे खुद के कारण, क्योंकि मैंने एक स्वार्थी इंसान होने की भूमिका बखूबी निभाई थी। इतने सालों में मुझे क्या मतलब रहा था उससे? कभी उस पेड़ के बारे में सोचा तक नहीं, उसे याद तक नहीं किया। जिसके साथ इतने अनगिनत मौन संवाद और नि:शब्द कड़ियों के बीच मैंने अपना बचपन संवारा था। मुझे क्या मतलब किसी पेड़ से! मैं तो उड़ान भरते-भरते चली गयी थी न यहां से! ऐसे किस-किस को याद रखती फिरुं?

स्वार्थ खोजना कोई मुश्किल नहीं। स्वयं के प्रतिबिम्बों में यदि झांक के टटोला जाए, तो आसानी से मिल जाया करते हैं स्वार्थ। फिर मूक वृक्ष, पेड़, पौधे, पक्षी हमसे कभी कुछ कहते ही कहां हैं? लेकिन हमें अपना साथ अवश्य ही दे जाते हैं। सिर्फ अपने होने भर से, बिना कुछ कहे, हमें आश्वासित कर जाते हैं। चाहे हमारी सुबह की चाय को अपनी हरीतिमा से और सुहाना ही बनाना क्यों न हो, या कंक्रीट की सड़कों के बीचों-बीच हमें कोएक्सिस्टेंस का मतलब ही समझाना क्यों न हो? या फिर चंद मिनटों के लिए हमें अर्बन फार्मिंग या अर्बन फॉरेस्ट्री से रूबरू ही कराना क्यों न हो!

आजकल इन %मास्क% के पीछे होने वाले मौन अनुभवों के बीच ऐसे तमाम हरसिंगारों की याद आया करती है। उस पेड़ ने मुझे सिर्फ गजरा बनाना नहीं सिखाया था, मुफ्त ही अपनी बाहों की छाया तले सींचा भी था। मेरी तमाम अनुभूतियों के समक्ष सबसे ज़्यादा गहरी यादें तो उन्हीं मौन संवादों की थीं जो आंखों से हुआ करते थे। जब हम किसी की पीड़ा को बिना कुछ कहे-सुने ही अपनी आँखों से समझ लेते हैं। इस सन्दर्भ में तो हरसिंगार ने ही मुझे बिना कुछ कहे-सुने समझा था। मैं उसको देख बड़ी हुई थी, तो क्या उसने भी कभी मुझे महसूस किया होगा? क्या उसने जाने से पहले मुझे याद किया होगा? या क्या उसकी आवाज़ ही मेरे कानों तक नहीं पहुंची थी? या अगर पहुंची भी हो, तो क्या जानबूझ के मैंने उन आवाजों को अनसुना कर दिया था? मुझे नहीं समझ आता। आखिर आजतक उसने मुझसे मांगा ही क्या था?

प्रकृति की नीरव शान्ति को आँखों, आवाजों एवं स्पर्श से ही महसूस किया जा सकता है। ख़ास तौर पर कोरोना में लॉकडाउन में ऐसे इकतरफा, नि:शब्द संवाद बालकनी से या खिड़कियों से कितनी ही बार महसूस करने को मिले। वैसे भी आजकल की टीवी पर बहस और चीखने- चिल्लाने के शोर ने इस शान्ति को और नीरस बना दिया है। कोरोना से पहले भी तो सड़क पर चलते किसी व्यक्ति से आँखें मिल जाया करती थीं, सफर करते वक़्त किसी की बात को सुनकर अमूमन मुस्कुरा दिया करते थे, और फिर आँखों से ही उस शख्श को देख उस संवाद से विदा ले लिया करते थे!

शायद इसीलिए हरसिंगार जैसे पेड़ हमें इन्हीं अनकही, मानवीय संवेदनाओं को सिखाने के लिए हमसे रूबरू हुआ करते हैं। जिन्हें हम भूल जाते हैं,या अनदेखा कर देते हैं। या तभी याद करते हैं, जब स्वार्थ हमें स्वार्थ से मिलाता है कभी, और मजबूर कर देता है जीवन की लय को उस अनंत मौन की गहराईयों के बीच महसूस करने के लिए।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008